

उस दिन काम नहीं बन रहा था। बेहद बैचैनी थी। सृष्टि के विराट आकाश की तरह, रंग-आकाश की शक्तियां विचित्र हैं। इनपर हमारा काबू नहीं। सालों के श्रम के बाद ऐसा होना असह्य लगता था। कृष्ण सूर्य से निकले हुए रंग, खुद बाधाएं डाल रहे थे। दो भागों में बटा 'चित्र' विरोधी तत्वों के बीच, क्लेश में, धुन्धला सा, थका हुआ लगा, अपनी निजी शक्तियों को नियन्त्रित किये बिना, सफेद दीवार पर, असहाय। रुकना होगा, मैंने कहा, हम देने के लिये विराम आवश्यक है। इन परिस्थितियों में मुझे केवल 'कविता' से ही सत्कन मिलता है। जानकर, धीरे, बहुत धीरे, अपने लिये ही, करुणामय प्रार्थना के समान, 'मीर' के काव्य पढ़ने लगा :

"बेरुदी ले गई कहीं हमको
देर से इन्तजार है अपना।"

"खबर कुछ तो आई है उस बेखबर तक "

"सिराने 'मीर' के आदिस्ता बोलो...

वकायक टेलिफोन की घन्टी बजी। एक शान्त और गंभीर आवाज़ थी, "मैं कविता लिखता हूँ। कुछ दिन ही हुए हैं, दिल्ली से आया हूँ। आपसे मिलना चाहता हूँ, चित्र देखना चाहता हूँ।"

मैंने फौरन कहा, "चित्र तो बन ही नहीं रहा है आज। पर आइये जरूर, शायद कविता से स्फुरा मिलेगा। हाँ, पांच बजे ठीक है।"

जवाब था, "छै बजे बहतर होगा। मैं दोपहर बच्चों को बाग में ले जा रहा हूँ। नहीं, मेरे नहीं, पड़ोस के ... "

"आइये, मैं इन्तजार करूँगा," मैंने धैर्य से कहा।